International Journal of Applied Research 2019; 5(7): 482-483

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(7): 482-483
www.allresearchjournal.com
Received: 15-05-2019
Accepted: 19-06-2019

डॉ. शर्मिला विश्वास
प्रवक्ता शेषाद्रीपुरम फर्स्ट ग्रेड कॉलेज यहलंका, बेंगलौर, कर्नाटक, भारत

Correspondence
डॉ. शर्मिला विश्वास
प्रवक्ता शेषाद्रीपुरम फर्स्ट ग्रेड कॉलेज यहलंका, बेंगलौर, कर्नाटक, भारत

निर्गुण भक्ति साहित्य का विकास

डॉ. शर्मिला विश्वास

भक्तिकाल

भक्तिकाल को हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग माना जाता है। भक्तिकाल का प्रारंभ संवत १३७५ से माना जाता हैं और उसका प्रभाव संवत १७०० तक स्वीकार किया जाता है। इस युग में भक्ति काव्य की प्रधानता रही। मध्ययुग में अर्थात भक्तिकाल में सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, व आर्थिक परिस्थितियाँ उत्साहजनक नहीं थी। सर्वत्र निराशा कुंठा और अपमान की भावनाएँ विधामान थी। हिन्दू समाज और सभ्यता मुसलमानी आक्रमणों से त्रस्त थी। उनके देवलय और पूजाघर ध्वस्त हो रहे थे, लोगों को तलवार के बल पर धर्म परिवर्तन के लिए वाध्य किया जाता था। निराशा, अंधकार और धार्मिक नैतिक पतन के इस युग में भारतीय जनमानस को एक मात्र आधार भगवान और उसकी भक्ति से मिला चाहे सगुण भक्ति हो या निर्गुण ऐसे भी भक्ति तो भारत का प्राण सदैव रही है, परंतु इस काल में यही प्रधान आधार और संबल रह गई। भक्ति की यह धारा दक्षिण भारत से आई और फिर सारे उत्तर भारत को रसमग्न कर दिया इसका प्रमुख श्रेय स्वामी रामानन्द को ही दिया जाता है।

"भक्ति द्राविड उपजी लाए रामानन्द
परगट करी कबीर ने सात दीप नौ खण्ड"

स्वामी रामानन्द महान भक्त, दार्शनिक और विचारक थे। उनकी द्रष्टि व्यापक और भावनाएँ उदार थी। वे भक्त और भगवान, दोनो सर्वसुलभ बनाना चाहते थे। भक्ति का प्रचार जन-जन तक फैलाना चाहते थे। उन्होंने सभी जातियों के लोगों को उनके भक्तिमार्ग में आने का आह्वान किया। महान संत कवि कबीर रामानन्द के प्रमुख शिष्य थे। वे कहते है:- "कासी मा हम प्रगट भये रामानन्द चेताये।"

भारत में निर्गुण भक्ति साहित्य का विकास

भक्तिकाल में निर्गुण ब्रह्मा को आराध्य मानकर भक्ति साहित्य दो रूपों में सृजित हुआ है होने निर्गुण आराध्य के दोनों साहित्य। सूफी और साहित्य संत ? में शैली की प्रस्तुतिकरण भाव भक्ति प्रति उसके और आराध्य कारण के इसलिए है। अन्तर भी में पक्ष दार्शनिक के दोनों ही साथ है। अन्तर पर्याप्त साहित्य के दोनों बावजूद के होने निर्गुनोपासकय में अन्तर है।

हिन्दी साहित्य में निर्गुण कवियों का यौग्दान

निर्गुण भक्ति के भागीरथ बने कबीर दास। कबीर की निर्गुण भक्ति में सुफियों का प्रेम्ताल और निराकार ब्रह्मा संबंधी ज्ञान तत्त्व की प्रधानता है। निर्गुण भक्ति साधना और सम्प्रदाय के अन्य संत कवि नानक, दादू दयाल, मूलकराज, रैदास, और सुन्दरदास आदि है। इन संत भक्त और कवियों ने जाति-पाँति का भेद मिटाकर ईश्वर की आराधना स्तुति व स्मरण के माध्यम से समस्तता लेने का प्रयत्न किया, ज्ञान और भक्ति का अद्भुत समन्वय लेकर ये कवि समाज के सामने आए और सामजिक विशमता, निरशा, भेदभाव व संकीर्णता के निराकरण के प्रयास किये।

निर्गुण भक्ति साहित्य के प्रमुख संत

1. कबीरदास: इनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के प्रवाद प्रचिलित हैं। कहते हैं, कशी में स्वामी रामानन्द का एक भक्त ब्राम्हण था जिसकी किसी विधवा कन्या कोस्वमीजी ने पुत्रवती होने का आशीर्वाद भूल से दे दिया।

फल यह हुआ कि उसे एक बालक उत्पन्न हुआ जिसे वह लहरतारा के ताल के पास फ़ेंक आयी। अली या नीरू नाम का जुलाहा उस बालक को अपने घर उठा लाया और पालने लगा। यही बालक आगे चलकर कबीरदास हुआ। कबीर का जन्मकाल जेठ सूती पूर्णिमा, सोमवार विक्रम संवत १४५६ माना जाता है। कहते है कि आरम्भ से ही कबीर में हिन्दू भाव से भक्ति करने की प्रविर्ति लक्षित होती थी जिसे उसे पालनेवाले माता-पिता न दबा सके। वे राम-राम जपा करते थे और कभी कभी माथे पर तिलक भी लगा लेते थे। इससे सिद्ध होता है की उस समय स्वामी रामानन्द का प्रभाव खूब बाद रहा था और छोटे-बड़े, ऊँच-नीच, सब तृप्त हो रहे थे। अतः कबीर पर भी भक्ति का यह संस्कार बाल्यावस्था से ही पद था। कबीर पंथी में मुसलमान भी हैं। उनका कहना है की कबीर ने प्रसिद्ध सूफी मुसलमान फकीर शेख तकी से दीक्षा ली थी। वे उस सूफी फकीर को भी कबीर का गुरु मानते है। कबीर की वाणी का संग्रह बीजक के नाम से प्रसिद्ध है। जिसके तीन भाग किये गये है। रमैनी, सबद और साखी। इसमें वेदांततत्त्व, हिन्दू मुसलमानों को फटकार,संसार की अनित्यता, हृदय की शुद्धि, प्रेम साधना की कठिनता, माया की प्रबलता, मूर्तिपूजा, तीर्थाटन आदि की असारता, हज, नमाज, व्रत, आराधना की गौणता इत्यादि अनेक प्रसंग है। सम्प्रदायिक सिक्षा और सिधांत के उपदेश मुख्यतः सखी के भीतर है जो दोहे में है। इसकी भाषा सधुक्कड़ी अर्थात राजस्थानी, पंजाबी मिली खाडीबोली है, पर रमैनी और सबद में गाने के पद है जिनमे काव्य की ब्रजभाषा पर कहीं-कहीं पुरबी बोली का भी व्यवहार है। खुशरो के गीतों की भाषा में हम ब्रज दिखा आये है इससे यह स्पस्ट हो जाता है की गीतों के लिये काव्य की ब्रजभाषा भी स्वीकृत थी। यह पैद दाख सकते है :-

हौं बलि कब देखौंगी तोहि।
अहनिस आतुर दरसन करनि एऐसी व्यापी मोहि।
नैन हमरे तुम्ह्को चाहैं, रती न मनै हारि।
बिरह अगिनि तन अधिक जारावै, ऐसी लेहु बिचारि।
सुनहु हमारी दादी, गोसाई, अब जनि करहु अधीर।
तुम धीरज, मैं आतुर, स्वामी, काँचे भाँडे नीर।
बहुत दिनन दे बिछुरे माधौ, मन नहिं बाँधैं धीर।
देह छता तुम मिलहु कृपा करि आरातिवंत कबीर।

2. रैदास: रामानन्द के बारह शिष्यों में रैदास भी माने जाते हैं जो जाति के चमार थे। इन्होने कई पदों में अपने को चमार कहे भी हैं, जैसे ; ''कह रैदासखलास चमारा। ऐसी मेरी जाति विख्यात चमार''।। कबीरदास के सामने रैदास भी कशी के रहने वाले जाते है। रैदास की भक्ति भी निर्गुण ढाँचे की जान पड़ती है। कहीं वे अपने भगवान् को सब में व्यापाक देखते है। रैदास का अपना अलग प्रभाव प्छाँह की वोर जान पड़ता है। साधोका एक संप्रदाय, जो फरुखाबाद और थोडा बहुल निर्ज़ापुर में भी पाया जाता है, रैदास की ही परंपरा में कहा जा सकता है क्योंकि उसकी स्थापना करनेवाले बीरभान उदय्दास के शिष्य थे और उदय्दास रैदास के शिष्यों में माने जाते है। रैदास का कोई ग्रन्थ नहीं मिलता, फुटकल पद ही बानी के नाम से, संतबानी सीरीज में संग्रहीत हैं। चालीसपद तो आदि गुरुग्रंथ साहेब में दिए गए हैं।

3. धर्मदास: वे बांधवगढ़के रहनेवाले और जाती के वनिये थे। बाल्यावस्था में ही इनके हृदय में भक्ति का अंकुर था और ये साधुओं का सत्संगदर्शन, पूजा, तीर्थाटन आदि किया करते थे।

4. गुरुनानक: गुरुनानक आरंभ से ही भक्त थे अतः उनका ऐसे मत की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक था, जिसकी उपासना का स्वरुप हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को सामान रूप से ग्राह्य हो।

5. सुन्दर दास: ये खंडिलवाल बनिए थे, और चैत्र शुक्ल १, संवत् १६४३में घौसा नामक स्थान में उत्पन्न हुए थे। निर्गुणपंथियों मे यही एक ऐसे व्यक्ति हुए हैं, जिन्हें समुचित शिक्षा मिली थी और जो काव्यकला की रीति आदि से अच्छी तरह परिचित थे।

6. दादू दयाल: सिधांत की द्रिष्टि से दादू कबीर के मार्ग के ही अनुयायी हैं, पर उन्होंने अपना एक अलग पंथ चलाया, जो दादूपंथ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। दादू की बानी अधिकार कबीर की साखी से मिलते-जुलते दोहों में है, कहीं-कहींगाने के पद भी हैं।

7. मूलाकदास: इनका जन्म लाला सुन्दरदास खत्री के घरमें वैशाख कृष्ण ५, संवत १६३१ में कड़ा, जिला इलाहबाद में हुआ। इनकी मृत्यु १०८ वर्ष की अवस्था में संवत १७३१ में हुई। इनकी दो पुस्तकें प्रसिद्ध है। रत्नखान और ज्ञानबोध हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों के उपदेश देने में प्रवृति होने के कारण दुसरे निर्गुणमार्गी संतों के सामने सनकी भाषा में भी फारसी और अरबी शब्दों का प्रयोग है।

उपसंहार

भक्तिकाल का परिणाम यह हुआ की घोर निराशमय भविष्य के लिये केवल राम का भरोसा ही उन्हें सच्चा भरोसा दिखाई पड़ा और संयोग ऐसा हुआ की उस समय कुछ संत महात्मा भी ऐसे आए जो जानता की भक्त भावना को बलवती बनाने में सहायक हुए। संवत १३७५ से १७०० की कालावधि में भक्ति के दो रूप प्रकट हुए। एक तो निर्गुण भक्ति थी, जिसका मूल श्रोत वेड माने जाते थे और जिसमे निर्गुण निराकार की उपासना ही सर्वोपरि थी और दूसरी सगुण साकार परमात्मा की भक्ति थी, जो पौराणिक मान्यताओं पर आधारित थी और जिसमे जीवन का सरस तथा आकर्षक बनाए रखने की शक्ति थी। सगुण भक्ति की यह धरा दक्षिण से उत्तर की ओर धीरे-धीरे बढ़ रही थी और कहा जाता है की उत्तर का ये साहसी माहात्मा रामानन्द इसे ओउरी तरह उत्तर में लाने का श्रेयाभाजन बना।

''भक्ति द्रविड़ उपजी लाए रामानन्द परगट करी कबीर ने सात टिप नौ खण्ड'' रामानन्द भक्ति का मार्ग समाज के सभी वर्गों के लिये खोलना कहते थे, इसलिए उन्होंने अपने शिष्य सभी जातियों के लोगों को बनाया। कबीर भी रामानन्द के शिष्य थे, जो इस पंक्ति से स्पष्ट होता है : ''कासी मा हम प्रगट भये रामानन्द चेताय''।

संदर्भ सूची ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – रामचंद्रशुक्ला
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ नगेन्द्र
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ आशोक तिवारी
4. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास – बच्चन सिंह
5. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास – बाबू गुलाबराय